Indian J. Soc. & Pol. 12 (02):103-106: 2025 **ISSN: 2348-0084 (PRINT)**
31 JULY 2025 **ISSN: 2455-2127(ONLINE)**

महात्मा गांधी और बाबा साहेब अंबेडकर का तुलनात्मक अध्ययन–टकराव सामाजिक आधार पर

अवधेश कुमार पांडेय[1], ओम प्रकाश सिंह[2]

[1]शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर, उ0प्र0, भारत
[2]प्राचार्य, दिग्विजय नाथ पी जी कालेज गोरखपुर, उ0प्र0, भारत

ABSTRACT

डॉ. अंबेडकर के पास एक प्रखर ऐतिहासिक दृष्टि थी लेकिन उनके पास आध्यात्मिक दृष्टि नहीं थी, इसीलिए उन्होंने ऐतिहासिक घटनाओं का सामाजिक मूल्यांकन तो करते थे किंतु उन्हें आध्यात्मिक मूल्यों के साथ रखने का प्रयास नहीं किया। जो भारतीय परिवेश में आवश्यक था। इसीलिए उनकी पूरी मान्यता व्यक्तिगत लगती है। इसका कारण भी हो सकता है कि उनका मूल विषय अर्थशास्त्र था और संभवतः ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को उन्होंने आर्थिक दृष्टि से देखा, वैसे उनकी यह सोच भारत की आर्थिक स्थिति के सुधार के लिए उचित लगती है। यही कारण है कि उनके सामाजिक विश्लेषण में वस्तुपरक एक ठोस तर्क मिलता है लेकिन उसमें पूर्वाग्रह की भी दुर्गंध आती है क्योंकि उन्होंने केवल दलित और अछूत वर्ग की समस्याओं पर ही ध्यान केंद्रित किया है। पूरे भारत के मूल शाश्वत् सिद्धांतों का आभास नहीं मिलता।

KEYWORDS: *अंबेडकर, गांधी, अस्पृश्यता, धर्म, समाज*

डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर के पास एक ऐतिहासिक दृष्टिकोण था, जो इतिहास की विकास प्रक्रिया को न केवल समझते थे बल्कि इतिहास की संपूर्ण घटनाओं का भी आकलन कर सकते थे हिंदू समाज में जन्म लेने और पले बड़े होने के कारण उन्हें इस बात की समझ हो चुकी थी कि इस समाज में क्या–क्या गड़बड़ियाँ एवं बुराइयाँ है। उन्होंने हिंदू धर्म का विरोध करके अपने आप को एक क्रांतिकारी सुधारक के रूप में समाज के समक्ष घोषित कर चुके थे। उन्होंने इस विरोध के लिए हिंदू धर्म का गहन अध्ययन भी किया था। इन अध्ययनों में ही उन्हें जातिवाद, छुआछूत, वर्ण व्यवस्था जैसे अमानुषिक बुराइयों ने उनके मन एवं बुद्धि से एक कट्टर विरोधी हिंदू बना दिया था।(अम्बेडकर एण्ड गांधी, 1946,पृ0317)

उनके मन में हिंदू धर्म के प्रति घृणा का भाव नहीं था लेकिन वह हिंदू समाज में वह व्याप्त सुधार चाहते थे इसके लिए उन्होंने अछूतोद्धार के लिए एक क्रांतिकारी आंदोलन छेड़ना चाहते थे डाटा अंबेडकर अपने प्रारंभिक जीवन काल में हिंदू धर्म को छोड़ने का विचार कभी भी मन में आने नहीं दिया था वह सिर्फ दलितों के प्रति हो रहे अत्याचार पशुओं से भी हीन जीवन बिताने वाले लोगों के जीवन में हिंदू समाज में रहकर सुधार करने का बीड़ा उठाया वे चाहते थे कि समाज में उपस्थित सभी जातियों को समता का अधिकार प्राप्त हो सके मैं कहां करते थे कि, "जाति अंतर्गत विवाह ही जाति व्यवस्था को सुरक्षित रखने के लिए करणीभूत(मूल कारण) है।"(अम्बेडकर, 1989,पृ014) डॉ अंबेडकर भी नहीं मानते कि व्यक्ति–समूह से समाज बनता है। उनका कहना है कि समाज कभी भी व्यक्ति से नहीं बनता, वह वर्ग से ही बनता है। प्रत्येक समाज में वर्ग अस्तित्व में होते हैं। यह वर्ग रचना विभिन्न कारणो जैसे आर्थिक या बौद्धिक या राजनीतिक कारणों से होती है। यह एक वैश्विक सत्य है कि व्यक्ति किसी न किसी वर्ग की इकाई बनकर जीना चाहता है। यही वर्ग जाति में बदले, बहुत मामूली भेदो के कारण उनका अस्तित्व भिन्न–भिन्न लगता है। वस्तुतः जाति एक स्वयं मर्यादित वर्ग है।(वही पृ0 14) डॉ. अंबेडकर ने कहा कि अब समय आ गया है कि सभी हिंदू समाज के भाइयों को अपने परंपरागत मूल्यों में परिवर्तन लाना चाहिए, इसके लिए उन्होंने एक मौलिक सुधारवादी आंदोलन का दृष्टिकोण लोगों के सामने प्रस्तुत किया और उसे अमल में लाने पर विशेष बल दिया।

गांधी और अंबेडकर दोनों छुआछूत के प्रबल विरोधी थे, लेकिन दोनों ही इस लक्ष्य को पाने के लिए भरसक प्रयास भी किये, किंतु इस लक्ष्य के समान होते हुए भी उसे प्राप्त करने के उपायों और प्राथमिकताओं के बारे में उनमें बुनियादी मतभेद थे। इन मतभेदों को नजर अंदाज करना भी उतना ही घातक होगा, जितना कि सिर्फ उन पर ही जोर देते रहना। इसमें कोई संदेह नहीं था कि गांधी–अंबेडकर का संघर्ष एक ऐतिहासिक सच है। अंबेडकर ने गांधी के साथ अपने मतभेदों को न सिर्फ आजीवन उग्रता से प्रस्तुत किया, वरन् गांधी को दलितों का सबसे बड़े शत्रु के रूप में पेश किया। गांधी ने जीवन भर छुआछूत का विरोध किया, लेकिन उसके साथ ही वे भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के सबसे प्रबल प्रवक्ता भी थे। 1920 में असहयोग आंदोलन से लेकर 1929 में ब्रिटेन से पूर्ण स्वतंत्रता की मांग के लिए देश और कांग्रेस को तैयार करने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका थी। गांधी का मानना था की इस लक्ष्य को हासिल करने के

1: Corresponding Author

लिए भारतीयों में व्यापक एकता जरूरी है। भारत के अत्यधिक जटिल, जन्मजात ऊँच– नीच और शाश्वत समाजिक विभाजनो से ग्रस्त परिवेश में गांधी न्यूनतम मतभेद और अधिकतम सहमति की तलाश में थे। इसके खिलाफ अंबेडकर का सबसे बड़ा लक्ष्य अछूतों पर सदियों से लादे गए गुलामी और अमानुषिकता के जुंए को नष्ट करना था। उनको डर था कि देश स्वतंत्र होने के बाद उच्च वर्ग के लोग अपनी बहुमत से दलितों को राजनीतिक अधिकारों से वंचित कर सकते हैं। वह दलितों के राजनीतिक अधिकारों की पूरी गारंटी चाहते थे, ताकि वह अतीत की तरह स्वतंत्र भारत में जन्मजात विषमताओं और भेदभाव पर आधारित अमानुषिक सामाजिक व्यवस्था में ही जुटे ना रहे, जैसा कि आज की स्थिति बन रही है।

गांधी जी एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने भारत के यथार्थ को ठीक से समझ कर अपने जीवन दर्शन का निर्माण किया था अर्थात् गांधी जी ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने भारतीय परिवेश को ठीक से समझा और सब की भावनाओं को मिलाकर एक जीवन दर्शन विकसित किया। उनके जीवन दर्शन में हर धर्म, हर पंथ, हर वर्ग, हर वर्ण और हर जाति को समान महत्व मिला है। उसमे पूरा भारत है, कोई भेद और अलगाव नहीं। वह राजनीति के द्वारा लोगों को बहकाने में विश्वास नहीं करते हैं, वह संत महात्माओं की तरह लोगों पर आध्यात्मिक प्रतिबंध थोपना नहीं चाहते थे और केवल अर्थ से उनका जुड़ाव नहीं था, वह मानवता के उपासक थे। इसीलिए उन्होंने सत्य और अहिंसा को मंत्रवत् स्वीकार किया और वह समाज के उद्धार के सहारे देश का उद्धार चाहते थे और नैतिकता को इसका आधार मानते थे। इसीलिए गांधी जी ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जो जैसा सोचते थे वहीं कहते थे और जो कहते थे वही करते थे। वे भारत की कमजोरियों को समाप्त कर उसे एक सही भारत के रूप में खड़ा करना चाहते थे।

गांधी जी ने भारतीय समस्याओं का गंभीरता पूर्वक अध्ययन ही नहीं किया है बल्कि समाज में उत्पन्न होने वाली उन समस्याओं पर भी ध्यान आकृष्ट किया जो हमारे सामाजिक ढांचे को खोखला कर रही थी। इन समस्याओं के प्रति उनका दृष्टिकोण क्षेत्रीय, संकीर्ण, राष्ट्रीय ना होकर अंतर्राष्ट्रीय एवं विशद् थी। भारत की सारी समस्याओं की ओर गांधी जी का ध्यान गया और साथ ही उनका कहना था कि यदि इन समस्याओं को हल कर लिया गया तो भारत अपना खोया हुआ गौरव पुनः प्राप्त कर सकता है, जो हमारे पुरखों को नसीब था। गांधी जी ने भारतीय समाज में व्याप्त बुराइयों पर कठोर प्रहार करते हुए कहा कि 'अस्पृश्यता' हिंदू समाज का एक घोर अभिशाप है क्योंकि इसने भारतीय समाज में दरारें पैदा कर दी हैं और समाज को काफी कमजोर कर दी है और समाज को काफी कमजोर कर दिया है। गांधी जी कहते हैं की अस्पृश्यता समाज का एक घुन है जो हिंदू समाज को अंदर ही अंदर खाये जा रहा है। इसी कारण जब देश आजाद हुआ तो भारतीय संविधान में इसे अपराध घोषित कराया। उनका कहना था की अस्पृश्यता निवारण किए बिना स्वराज की प्राप्ति का कोई अर्थ नहीं है। गांधीजी ने अछूतों को 'हरिजन' के नाम से संबोधित किया था और उनका अधिकांश समय इन्हीं लोगों के बीच गुजरता था, उनके साथ खाना–पीना करते थे। उन्होंने हरिजनों को यह उपदेश दिया था कि वे मांस खाना छोड़ दे, शराब पीना छोड़ दे, जुँआ खेलना छोड़ दे, सभी प्रकार के दुर्व्यसनो का परित्याग कर दें और दूसरों के छोड़े गए जूठनों को स्वीकार न करें। क्योंकि इससे अनेको बीमारियाँ फैलती हैं।(पूरनमल,2003,पृ086)

गांधी जी का मानना था कि हिंदुओं के बीच अस्पृश्यता का प्रसार सत्यता के सिद्धांतों का खंडन करता है जो भारतीय लोगों के गौरव को तोड़ देता है। छुआछूत जैसी कुप्रथा समाज की देन थी जो मानवीय आचार संहिता का बुरी तरह से उल्लंघन करती है। इसी कारण गांधी जी अपने पूरे राजनीतिक जीवन में अस्पृश्यता के खिलाफ बड़े पैमाने पर संघर्ष करते रहे और जन सामान्य के मस्तिष्क से इस अमानवीय प्रथा को हमेशा के लिए समाप्त कराना चाहते थे। सामाजिक सुधार की दृष्टि से गांधी जी का सबसे बड़ा योगदान अछूतोद्धार और हरिजनोंद्धार था, क्योंकि यह सुधार ना केवल हिंदू धर्म में बल्कि अन्य धार्मिक समुदायों में भी अति आवश्यक है। छुआछूत की समस्या एक राष्ट्रीय समस्या बन गई है, इसी कारण गांधी जी आजीवन इस लड़ाई को लड़ते रहे, वैसे तो गांधी जी भारत में वर्णाश्रम व्यवस्था के समर्थक थे। (तेंदुलकर, 1951, पृ. 13)

एक विधिवेत्ता होने के कारण डॉ. अंबेडकर सामाजिक समस्याओं का समाधान संविधान के द्वारा चाहते थे। वैसे उनके जीवन के साथ हुई समाज की दुर्व्यवहार उसके मूल में था, क्योंकि अंबेडकर का मानना था कि किसी लोकतांत्रिक व्यवस्था का सही संचालन उसके संविधान के ही आधार पर हो सकता है। इसीलिए वह चाहते थे कि लोकतंत्र प्राप्त करने से पहले ही अपने देश में फैली हुई जाति भेद और वर्ण भेद के विचार संवैधानिक रूप से हटा दिया जाए। इस समय भारत में अछूत और छोटी जातियों के बारे में बहुत भारी भेद चल रहा था। चूंकि डॉ. अंबेडकर दलितों को सबके समान सामाजिक और राजनीतिक अधिकार सभी को दिलाना चाहते थे, इसीलिए उन्होंने इसको आसान बनाने के लिए अलग पृथक प्रतिनिधित्व की बात उठाई। उनका मानना था कि वर्ण व्यवस्था में परिवर्तन एवं सामाजिक न्याय के लिए कोई स्थान नहीं है। वर्ण व्यवस्था ने हीं जातिवाद को जन्म दिया जो सामाजिक एकता एवं सुदृढता के विपरीत पड़ता है।(अम्बेडकर, 1936,पृ021) वर्ण व्यवस्था में आधुनिक भारतीय समाज के लिए कोई नवीन संदेश नहीं है। वह निरर्थक एवं हानिकारक सिद्ध हो चुकी है। अच्छे सामाजिक संबंधों की जड़े इसमें नहीं है। इस वर्ण व्यवस्था के चार वर्णों के लोगों के बीच एक स्तरीय, उतार– चढ़ाव की असमानता प्रतिष्ठित कर रखी है, जिसके अनुसार ब्राह्मण सबसे उच्च, उससे नीचे क्रमशः क्षत्रिय, वैश्य और निम्नतम स्तर पर शूद्र है। इसके अंतर्गत यदि ऊपर की ओर जाओ तो सम्मान, आदर है और नीचे की ओर देखो तो घृणा, अनादर है।(अम्बेडकर, 1947, पृ08) डॉ. अंबेडकर के अनुसार वर्ण

व्यवस्था अथवा जाति प्रथा ने जनचेतना को नष्ट कर दिया है। इसने सार्वजनिक धर्मार्थ की भावना को भी नष्ट कर दिया है। जाति प्रथा के कारण किसी भी विषय पर सार्वजनिक सहमति का होना असंभव हो गया है।(अम्बेडकर वांगमय, खण्ड 1 1994, पृ0 77)

गांधीजी अस्पृश्यता के कट्टर विरोधी थे, इसी कारण लोगों को इसमें विरोधाभास दिखाई पड़ता है। अगर कोई जुलाहे का बेटा जुलाहे का काम करे तो वह अपने पिता द्वारा उपलब्ध योग्यता को आगे बढ़ा सकता है, जिसके कारण कपड़ा उद्योग भी उन्नति करता चला जाएगा, लेकिन यदि जुलाहा का बेटा डॉक्टर या इंजीनियर की अभिरुचि या योग्यता रखता है तो उसको समाज कभी रोक नहीं सकता है, इसकी उसे आजादी मिली है। गांधी जी अभिरुचि और योग्यता के अनुसार कार्य का बँटवारा करने पर बल देते थे। इसी आधार पर वर्ण व्यवस्था भी काम करती रहेगी।(मासरूवाला, 1962, पृ0 9) जब से कुछ पेशे निम्न और उच्च स्तर के समझे जाने लगे, यही से वर्ण व्यवस्था में विकृतियाँ आनी शुरू हो गई और इसी विकृ ति का कुप्रभाव के रूप में अस्पृश्यता जैसी भयानक बीमारी का जन्म होता है। जो धीरे–धीरे भारतीय समाज में स्थाई रूप धारण कर ली। बाद में कुछ वर्ग को तो इतना नीच समझा जाने लगा कि उनको छूना तक वर्जित कर दिया गया।(हरिजन सेवक संघ, 14 अप्रैल 1933)

उनका कहना था कि संविधान ऐसा बनाया जाना चाहिए, जिसमें दलितों पर बहुसंख्यकों के अत्याचारों को रोका जा सके। बहुसंख्यकों से उनका आशय ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य से था जिन्हें अस्पृश्य माना जाता था। वह कहते थे कि इसके लिए दलितों को स्वतंत्र नागरिक के सभी समान अधिकार प्राप्त हो एवं वे सत्ता प्राप्त कर सकें। ब्रिटिश सरकार ने अपने 'फूट डालो और शासन करो' नीति के चलते अपने सांप्रदायिक निर्णय में डॉ. अंबेडकर की मांग को स्वीकार करके, उन्हें एक बढ़ावा दे दिया था। गांधी जी गोलमेज सम्मेलन में डॉ. अंबेडकर का खुलकर विरोध किया था और अछूतों के हितैषी के रूप में स्वयं को घोषित किया था। गांधी जी ने कहा था कि दलित हिंदू समाज के अंग है। उनकी समस्या को हिंदू समाज स्वयं हल करेगा, लेकिन गांधी जी के विरोध के बाद भी ब्रिटिश सरकार ने दलितों के पृथक अधिकारों को स्वीकार कर लिया, तब गांधी जी ने कहा कि वह सिखों और मुसलमानों के पृथक अधिकारों को तो सहन कर सकते हैं, परंतु दलितों के पृथक अधिकारों को नहीं। उन्होंने इससे क्षुब्ध होकर आमरण अनशन कर दिया। गांधी जी की प्राण रक्षा के हित में ही वह 'पूना पैक्ट' नामक ऐतिहासिक समझौता डॉ. अंबेडकर को करना पड़ा। अंबेडकर के अनुयायियों में इसके लिए गांधी के प्रति घृणा के भाव उठे थे।

'कांग्रेस और गांधी ने अछूतों के लिए क्या किया?' नामक पुस्तक लिखकर डॉ. अंबेडकर ने ब्रिटिश सरकार को दलितों के संदर्भ में कांग्रेस और गांधी के वास्तविकता से परिचित कराने का प्रयास किया। यह पुस्तक यह बताती है कि किस तरह गांधी और उनकी कांग्रेस ने अस्पृश्यता– निवारण, मंदिर– प्रवेश और दलितोंद्धार के नाम पर नाटक किया था। किस प्रकार गांधी दलितों के राजनीतिक अधिकारों के खिलाफ थे। डॉ अंबेडकर का क्रोध इस पुस्तक में बहुत अधिक दिखता है। डॉ. अंबेडकर ने गांधीवाद को दलितों के लिए तबाही कहा है, उससे उन्हें दूर रहने का परामर्श दिया है। गांधी जी की आलोचना से भी कटु आलोचना उन्होंने गांधीवाद की की है। उन्होंने लिखा है "गांधीवाद और हिंदुत्व दोनों एक ही है। हिंदुत्व को न्यायोचित ठहराने के लिए गांधीवाद का जन्म हुआ है। यह हिंदुत्व का ही एक संस्करण है।"

गांधी– अंबेडकर मतभेदों की सतही चर्चा से आज के भारत में जातिगत पक्षधरता इतनी प्रबल हो गई है कि निष्पक्ष जीवन जीना बहुत कठिन हो गया है। इसी कारण आलोचना चारों ओर हो रही है। कुछ इस तरफ के या उस तरफ के लोग मनमानी व्याख्या करके गाली– गलौज और मूर्तियों को अपमानित करने पर भी उतर आते हैं। इतिहास में प्रभावशाली हस्तक्षेप करने वाले ऐसे नायको के विचारों को तोड़ने– मरोड़ने के बदले उनकी गहराई में जाकर छानबीन करने की जरूरत है। शैतान की औलाद कह कर निंदित करना अथवा मूर्ति पूजा के कर्मकांडों से देवत्व प्रदान करना, दोनों ही गलत और अविवेकपूर्ण कृत्य है। मतों और पंथों से बहुत बड़ा भटकाव है। तथ्य यह है कि दोनों ही भारतीय समाज के रूपांतरण के प्रबल समर्थक और अग्रणी कार्यकर्ता थे। दोनों के मत और पंथ मुक्तिकामी विचारधारा से प्रभावित थे। इसमें किसी एक का अग्राधिकार स्वीकार नहीं किया जा सकता, दोनों के अपने–अपने ठोस तर्क हैं। चूंकि नियमों और कार्यक्रमों के प्रभाव भविष्य में केंद्रित हैं, इसलिए ईमानदार मतांतर की काफी गुंजाइश है। भविष्य के बारे में केवल अनुमान ही लगाए जा सकते हैं। अनुमानो की सीमाओं को न पहचान पाना ही अविवेकपूर्ण कृत्यों की जड़ है इस पहचान में बहुत से मिलन बिंदु छिपे है। उनकी खोज करने के लिए तत्कालीन परिस्थितियों का वस्तुनिष्ठ और गहन अध्ययन जरूरी है, क्योंकि गांधी और अंबेडकर के मतों और पंथों के सेतु बंधन से ही इन चुनौतियों से जूझने की योजनाएं बन सकती है।

गांधी और अंबेडकर में खुल्लम–खुल्ला टकराव 1931 में लंदन में हुए दूसरे गोलमेज सम्मेलन में सामने आया। दूसरे सम्मेलन में गांधी कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि थे। इसमें भाग लेने के लिए जाने से पहले गांधी और अंबेडकर में एक मात्र मुलाकात 14 अगस्त, 1931 को मुंबई स्थित मणि भवन में हुई। इस मुलाकात में डॉ. अंबेडकर ने गांधी को यह बात समझाने की कोशिश की कि कांग्रेस ने अब तक अछूतों की दशा सुधारने के लिए कोई ठोस कार्य नहीं किया है। उन्होंने कहा कि गांधी की यह भ्रांत धारणा है कि उनको जनता के प्रतिनिधि के रूप में अछूतों का भी भारी समर्थन प्राप्त है। गांधीजी डॉ. अंबेडकर की इस राय से सहमत नहीं थे कि कांग्रेस दलितों के लिए कुछ भी नहीं कर रही है। गांधी और अंबेडकर में से कोई भी एक दूसरे से अपनी बात नहीं मनवा सका।(द टाइम्स आफ इण्डिया, 15 अगस्त 1931) गोलमेज सम्मेलन में गांधी और अंबेडकर के बीच सबसे बड़ा मतभेद का कारण जाति व्यवस्था को लेकर था।

गांधीजी वर्ण व्यवस्था के समर्थक थे और छुआछूत को मिटाना चाहते थे, जबकि अंबेडकर पूरी जाति व्यवस्था को ही खत्म करना चाहते थे। अंबेडकर ने द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में दलितों के लिए अलग निर्वाचन क्षेत्र की मांग की थी, जिसके कारण गांधी और अंबेडकर के बीच टकराव हुआ था। गांधी जी ने अंबेडकर को चुनौती देते हुए कहा था कि जो लोग 'अछूतों' के राजनीतिक अधिकारों की बात करते हैं, वे भारत को नहीं जानते। गांधी जी ने दलितों के लिए हरिजन (ईश्वर के लोग) शब्द का इस्तेमाल करते थे, जबकि अंबेडकर को यह पसंद नहीं था। गांधी जी गांवों में पंचायती राज के समर्थक थे, जबकि अंबेडकर इसके विरोधी थे।

गांधी की चिंतन एवं कर्मण्यता को मूलभूत आध्यात्मीकरण से विलग्न नहीं माना जा सकता। किसी पंथ, विश्वास, मत एवं परिपाटी से मुक्त गांधी चिंतन आध्यात्मिक मूल्यों की शाश्वत निर्णायकता का परिचायक है। साधनों की शुचिता, प्राथमिकता एवं व्यक्ति की गुणवत्ता ही आध्यात्मिक की परिचायक मानी गई। अंबेडकर यदि बौद्ध शैली में धर्म एवं नैतिकता को सार्वभौमिक मानते थे तो गांधी ने वैयक्तिक एवं सामाजिक स्तर पर नैतिकता, नीति एवं अभयपूरित स्वनिर्णय को ही आध्यात्मिकता का पर्याय माना। ऐसा माना गया है कि गांधी विविध विश्वासों एवं पंथ परंपराओं को धर्म में रूपांतरित करना चाहते थे, जबकि बी. आर. अंबेडकर हिंदू पंथवादी व्यवस्था से ग्रसित एवं प्रताड़ित होकर विश्वास जन्य विकल्प हेतु प्रयासरत रहे। नव बौद्ध आग्रहों के प्रति उनकी आसक्ति उसी जिज्ञासा की सूचक है। पंथान्तरण जैन धर्म की शाश्वता की प्राप्ति संभव है या नहीं, क्या विषय विवादास्पद है गांधी एवं अंबेडकर इस संदर्भ में वैभिन्न के सूचक हैं। (भारती, 2009 पृ0 31)

गांधी की दृष्टि दार्शनिकता से परिपूर्ण समाष्टिगत दृष्टि रहीं हैं। वे शाश्वत मूल्यों को महत्व देते रहे एवं व्यक्ति के विकास को संपूर्णता में देखते थे। जबकि डॉ आंबेडकर एक वर्ग विशेष के कल्याण की बात करके अपने दृष्टिकोण में परिसीमितता की परछाई दर्शाते हैं। यदि एक ओर गांधी समग्र मानव समाज के संत्रास से संवेदनशीलता को प्रभावित रूप से व्यक्त कर सके तो उनका संपूर्ण दर्शन एवं कर्मण्यता विश्वत्व के उन्नयन से संयुक्त रहा तो दूसरी ओर अंबेडकर ने सामाजिक न्याय एवं अधिकारों के वृत्त को भारतीय संदर्भ से विलग्न नहीं देखा। परंतु उनकी दृष्टि भारतीय व्यवस्था के अनुभवों से प्रभावित रहीं एवं विश्व समाज में व्याप्त अन्याय एवं चुनौतियों के प्रति सजग होने के बावजूद अंबेडकर की प्राथमिकता भारतीय संदर्भ में बनी रही। एक ऐसी समाज व्यवस्था जिसके अंतर्गत सभी व्यक्तियों को उनकी योग्यता एवं सामर्थ्य के अनुरूप सर्वांगीण विकास के अवसर सुलभ हो तथा जाति, लिंग, जन्म, रंग, नस्ल, स्थान आदि के आधार पर भेदभाव के बिना व्यक्ति को सामाजिक न्याय के सदस्य के रूप में उचित स्थान तथा सम्मान प्राप्त हो, सामाजिक न्याय की अवस्था कहा जा सकता है। पाश्चात्य ही नहीं अपितु भारतीय समाज में भी प्राचीन काल से ही न्याय की भावना को देखा जा सकता है। समाज के प्रति व्यक्ति को उसकी योग्यतानुसार अवसर तथा पारितोषिक प्राप्ति के उल्लेख वैदिक साहित्य में भी दृष्टिगोचर होते हैं। विश्व की समस्त व्यवस्थाओं में सभी कालों में न्याय का बोध अवश्य होता है। मानव विवेक, विकास के साथ–साथ न्यायबोध, अभिव्यक्ति का विस्तार स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में विकसित होता दिखाई देता है। विद्यमान समाज में असमानता, दासता, सामाजिक भेदभाव, जातिगत उच्च– नीच आदि की समाप्ति का आह्वान कर सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए भारत के समाज में गौतम बुद्ध, स्वामी दयानंद सरस्वती से लेकर गांधी एवं अंबेडकर जैसे महापुरुषों ने अपना योगदान दिया।(शर्मा, 2012 पृ0 44)

REFERENCES

अंबेडकर, डॉ. बी.आर. एंड गांधी, (1946)*'व्हाट कांग्रेस हैव इन टू दि अनटचेबल्स',* मुंबई, बैंकर एंड कंपनी

अंबेडकर, डां.बाबा साहेब (1989) *'हिन्दू ची जाति प्रथा व तीमोडण्याचा मार्ग',*(अनु.गजेन्द्र रघुवंशी), पुणे, श्री विद्या प्रकाशन

पूरणमल, (2003) *'मानवाधिकार, सामाजिक न्याय एवं भारतीय संविधान',* जयपुर, पोइन्टर पब्लिशर्स

तेण्डुलकर,डी. जी. 'महात्मा (1951) *दि लाइफ आफ मोहनदास करमचंद गांधी',* खंड– 4, प्राक्कथन, मुंबई, झवेरी एंड तेण्डुलकर प्रकाशन,

अंबेडकर, बी. आर.,(1936) *एनिहिलेशन ऑफ कॉस्ट,* परिशिष्ट–2, कौशल्या प्रकाशन, औरंगाबाद

अंबेडकर,बी.आर. (1947) *'हू वेयर द शूद्राज'*,1947,पृ.8

हरिजन सेवक संघ, दिल्ली, 14 अप्रैल, 1933

शर्मा, डॉ. वीरेंद्र, *'आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचारधाराएं,'* आगरा, प्रिंट वर्ड प्राइवेट लिमिटेड,

'हरिजन' पत्र में वर्णित, 25 मार्च, 1939

अंबेडकर, बी.आर.(1990) *'चंद्रमा में उद्धित',* बसंत (अनु.) डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर रिटेन सेंड भाषण, शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र शासन, मुंबई,

शर्मा, ब्रजकिशोर (2012) *'भारत का संविधानः एक परिचय,'* नई दिल्ली, पी.एच.आई. लर्निंग प्राइवेट लि